अस्पृश्यता के मुद्दे पर गाँधी और अम्बेडकर के बीच मतभेद : एक ऐतिहासिक विश्लेषण

रीता*

अस्पृश्यता के मुद्दे पर गाँधी और अम्बेडकर में तीखा मतभेद था, विशेषकर अस्पृश्यता के तीन मुद्दे ऐसे थे, जो दोनों में सहमति बनाना अत्यंत ही कठीन था। इन तीन मुद्दों में से सबसे नाजुक मुद्दा अस्पृश्यों का प्रवक्ता होने का था। घटना के साठ–पैंसठ साल बाद यह कहना आसान है कि गाँधी और अम्बेडकर प्रयत्न करते तो अछूतों के प्रवक्ता के सवाल पर गोलमेज परिषद् में हुआ टकराव टाला जा सकता था। अकसर इस टकराव के लिए गाँधी को ही दोष दिया गया है। सर चिमनलाल सीतलवाड ने गोलमेज परिषद् में हिंदू उदार नेता के रूप में भाग लिया था। उनको गाँधी का रवैया काफी कठोर और हठपूर्ण लगा। उन्होंने कहा कि गाँधी ने 'गर्वनमेंट ऑफ इंडिया एक्ट, 1919 पढ़ा तक नहीं है। यह भी कि उसके बाद भारतीयों के राजनीतिक अधिकारियों के बारे में हुई घटनाओं और चर्चाओं से वे अनभिज्ञ है। गाँधी ने सीतलवाड के आरोपों का कोई जवाब नहीं दिया। उन्होंने सिर्फ इतना कहा कि सर चिमनलाल मेरे बड़े भाई हैं। उनको मेरी आलोचना करने का पूरा अधिकार है।

एन0सी0केलकर ने भी अपनी आत्मकथा में दूसरी गोलमेज परिषद् के बारे में उदारवादी सप्रू और जयकार की बातचीत अद्धृत की है। उसमें उन्होंने यह मत व्यक्त किया है कि दूसरी गोलमेज परिषद् में ''गाँधी ने, अपने साथियों के साथ, सहयोगपूर्ण व्यवहार नहीं किया। यह भी कि वे अपने घमंडी स्वभाव के कारण विडंबनावादी बनकर रह गए।

गोलमेज परिषद् में गाँधी के रूख और आचरण के बारे में ये सारे आक्षेप सही हों तब भी गाँधी के पास अछूतों का प्रवक्ता होने का अपना दावा पेश करने के अलावा अन्य कोई उपाय नहीं था। अस्पृश्यों के बारे में बोलने के अपने अधिकार से वंचित होने और अस्पृश्यों की तरफ से बोलने का एकाधिकार डॉ0 अम्बेडकर तथा रावबहादुर श्रीनिवास को समर्पित करने का अर्थ होता, भारत में उभरती हुई चेतना की भ्रूण–हत्या में साझेदार बनना। गाँधी के साथ 'नेहरू समिति' की रिपोर्ट से भी बँधे हुए थे। उक्त समिति ने अस्पृश्यों को प्रतिनिधित्व देने के बारे में किसी विशेष व्यवस्था की सिफारिश नहीं की थी।

गाँधी और अम्बेडकर के टकराव का दूसरा मुद्दा हिंदू समाज समाज और अस्पृश्यों के संबंधों का था। गाँधी अस्पृश्यों को हिंदू समाज का अविभाज्य अंग मानते थे और उनके साथ हो रहे अमानुषिक व्यवहार को वे 'पाप', 'कलंक' तथा 'ईश्वर के प्रति अपराध' समझते थे। उनकी दृष्टि में यह एक सामाजिक समस्या थी। इसे प्रायश्चित से ही मिटाया जा सकता था। वह प्रायश्चित अछूतों को नहीं, सवर्णों को करना होगा। इसलिए जब अम्बेडकर ने उनपर और कांग्रेस पर सवर्णों के हितों की पोषक संस्था होने का आरोप लगाया, तो गाँधी दहल गए। गोलमेज परिषद् में तथा उस दौरान आयोजित सार्वजनिक कार्यक्रमों में उन्होंने बार–बार यह बात दोहराई कि ''सारे संसार के राज्य के बदले भी मैं अस्पृश्यों के अधिकार को नहीं बेचूँगा।'' गाँधी ने यह भी कहा कि ''अछूत अगर ईसाई अथवा मुसलमान हो जाएँ तो मैं सह लूँगा; किंतु गाँवों में यदि हिंदुओं के दो भाग हो जाएँ तो हिन्दू समाज की जा दशा होगी, मुझसे वह सही नहीं जा सकेगी।

अस्पृश्यों की सामाजिक और धार्मिक पहचान के बारे में अम्बेडकर का मत स्थिर नहीं था। एक समय था जब वे अस्पृश्यों को हिंदू समाज का अंग मानते थे। वे अछूतों को यज्ञोपवित पहनाने के कार्यक्रम का आयोजन तो करते ही थे, साथ ही सवर्णो तथा अछूतों में सहभाज के आयोजनों को भी बढ़ावा देते थे। उनकी अध्यक्षता में गठित 'समाज समता संघ' ने इस प्रकार के अनेक आयोजन किये थे। यद्यपि बाद में उनके विचार बदल गए, किंतु कुछ समय तक वे हिंदू मंदिरों में अछूतों के प्रवेश के अधिकार के लिए सत्याग्रह के भी समर्थक थे। गोलमेज परिषद् के दौरान भी 'बहिस' के कार्यकर्ता नासिक के कालाराम मंदिर में प्रवेश के लिए आंदोलन कर रहे थे। उन्होंने स्वयं इस मंदिर–प्रवेश सत्याग्रह में हिस्सा लेकर कार्यकर्ताओं का हौसला बढ़ाया था। परंतु अब अम्बेडकर धार्मिक सांस्कृतिक प्रश्नों के बजाय राजनीतिक शक्ति को प्रधानता देने लगे थे।

गोलमेज परिषद् में गाँधी और अम्बेडकर में मतभेद का तीसरा मुद्दा अस्पृश्यों के प्रतिनिधित्व का था। गाँधी अस्पृश्यों की समस्या को सामाजिक समस्या ही मानते थे। इसलिए वे निरंतर वयस्क मताधिकार पर ही जोर देते रहे। उनको भारत में चल रहे समाज–सुधार आंदोलन पर भी बहुत भरोसा था। उन्होंने अपने लंदन प्रवास के दौरान बार–बार कहा, कि भारत में समाज–सुधार की एक प्रचंड लहर चल रही है। उसके परिणामस्वरूप अस्पृश्यता हमारे जीवनकाल में ही अतीत की कहानी बनकर रह जाएगी।

शोध छात्रा इतिहास विभाग वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय आरा, भोजपुर।

गाँधी का मानना था कि ''विशेष निर्वाचक मंडल" या सीटों का आरक्षण उनके लिए घातक होगा। अगर इसे प्राप्त करने की कोशिश की गई तो फिर उनके खिलाफ विरोध भड़केगा। मेरा ख्याल है कि उनके 'खुले दरवाजे से आने पर' उन्हें सामान्य हिंदुओं जैसे मताधिकार दिए जाने से ही उनके हितों की सबसे अच्छी तरह रक्षा हो सकेगी। किंतु अस्पृश्यों के प्रतिनिधित्व की प्रक्रिया के बारे में डॉ0 अम्बेडकर का मत स्थिर नहीं रहा; वह बदलता गया। पहली गोलमेज परिषद् में 31 दिसम्बर, 1930 को अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा था–''अगर आप लोग हमे वयस्क मताधिकार दे रहे है तो दलित वर्ग, अपने पुनर्गठन के लिए आवश्यक थोड़े से समय के बाद, आरक्षित सीटों के साथ संयुक्त निर्वाचक मंडल को स्वीकार करने के लिए सहमत है। किंतु यदि आप हमें वयस्क मताधिकार नहीं देते तो दलितों के लिए भी अन्य अल्पसंख्यक वर्ग की तरह पृथक निर्वाचक मंडल आवश्यक है।''

पहली गोलमेज परिषद् की 16 जनवरी, 1931 की कार्यवाही के विवरण से उनके मत में परिवर्तन का पता लगता है। पिछली बैठक का विवरण पढ़ने के बाद डॉ0 अम्बेडकर ने शिकायत की, कि मैंने पिछली बैठक में यह राय दी थी कि वयस्क मताधिकार मिलने पर भी अस्पृश्यों के लिए दस वर्षों तक पृथक् निर्वाचक मंडल की व्यवस्था बनी रहनी चाहिए। उन्होंने सभापति से पिछली बैठक की कार्यवाही के विवरण में इस आशय का संशोधन करने का अनुरोध भी किया गया। किंतु सभापति ने उनका अनुरोध यह कहकर अमान्य कर दिया कि ''मैं सही रिपोर्ट को बदलने की अनुमति नहीं दे सकता।

गाँधी में वास्तविकताओं को भी भाँप लेने की अद्भूत क्षमता थी। परिषद् की कार्यवाही किसी नतीजे पर पहूँचे बिना घिसटती जा रही थी। परिषद् एक प्रकार की वाद–विवाद प्रतियोगिता केंद्र बनकर रह गई थी। हताश के उस माहौल में गाँधी के दो बयान उल्लेखनीय हैं। एक बयान में उन्होंने परिषद् में बुलाए गए प्रतिनिधियों के प्रतिनिधिक चरित्र को सीधी चुनौती दी। अल्पसंख्यकों के साथ अनौपचारिक बातचीत से भी कोई हल नहीं निकलने की सूचना देते हुए उन्होंने कहा, ''यदि मैं यह कहूँ कि बातचीत का नाकामयाब होना हमारे लिए शर्म की बात है, तो इससे पूरी सच्चाई व्यक्त नहीं होती। इसमें से प्रायः सभी लोग उस दल या वर्ग के चुने हुए प्रतिनिधि ा नहीं हैं, जिनके हम प्रतिनिधि कहे जाते हैं। यहाँ हम सरकार द्वारा नामजद होने की वजह से हैं।'' एक अन्य अवसर पर भी गाँधी ने कहा, ''जब मैंने यहाँ भारतीय प्रतिनिधि ायों की फैरहस्ति देखी तो मुझे एकाएक लगा कि ये लोग राष्ट्र के पसंद किए हुए नहीं है। ये वो सरकार के पसंद किए हुए लोग हैं''। सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व की समस्या का उल्लेख करते हुए गाँधी ने कहा कि ''यह समाधान स्वराज के संविधान का मुकुट तो बन सकता है, उसकी नींव नहीं बन सकता।''

जिन दिनों लंदन में गोलमेज परिषद् हो रही थी, उन्हीं दिनों वहाँ चुनाव भी हो रहे थे। नई कॉमंस सभा में लेबर दल की स्थिति पहले से कमजोर हो गई थी। प्रधानमंत्री तो रैम्जे मैंकडॉनल्ड ही रहे, परंतु अब वे मजदूर दल और टोरी पार्टी के मिली–जुली 'राष्ट्रीय सरकार' के प्रधानमंत्री थे। टोरी पार्टी भारतवासियों को स्वतंत्रता के योग्य ही नहीं समझती थी। इस सम्मेलन के आरंभ में जब गाँधी अपनी जगप्रसद्धि पोशाक में ही ब्रिटिश सम्राट् के साथ चायपान के लिए बकिंघम पैलेस गए तब चर्चिल ने उनको 'अधनंगा फकीर' कहकर उनकी और सम्मेलन की मेजबानी करनेवाली सरकार की खिल्ली उड़ाई थी।

गोलमेज परिषद् से जो थोड़ी–बहुत आशा हो सकती थी, वह भी 13 नवंबर, 1931 को 'अल्पसंख्यकों के समझौते' की ओर से दिए गए ज्ञापन से तथा उसे प्रधानमंत्री का आर्शीवाद मिलने से समाप्त हो गई। यह ज्ञान मुसलमानों, दलित वर्गों, एंग्लो इंडियनों, यूरोपियनों और भारतीय ईसाईयों की ओर से दिया गया था। इसमें माँग की गई थी कि सभी विधानमंडलों में इन संप्रदायों का पृथक निर्वाचक मंडल हो। शर्त यह रहेगी कि दस वर्ष बीत जाने पर पंजाब और बंगाल के मुसलमानों और किसी अन्य प्रांत के किसी भी अन्य अल्पसंख्यक समुदाय को संयुक्त निर्वाचक मंडल स्वीकर करने की स्वतंत्रता रहेगी। दलित वर्गों के बारे में निर्वाचक मंडल बीस वर्ष से पहले संयुक्त निर्वाचन मंडल में नहीं बदले जाएँगे। इस दस्तावेज पर आगा खाँ, डॉ0 अम्बेडकर, रावबहादुर पन्नीरसेल्वम, सर हेनरी गिडनी और सर ह्युबर्ट कार के हस्ताक्षर थे।

समझा जाता है कि यह ज्ञापन प्रधानमंत्री के सुझाव पर ही तैयार किया गया था। उनकों यह महसूस हो गया था, कि अल्पसंख्यक समिति किसी भी सर्वसम्मत समाधान पर नहीं पहुँच पाएगी। इसलिए उन्होंने समिति की बैठक को अनिश्चित अवधि तक स्थगित करने का का सुझाव दिया और सदस्यों से कहा कि आप मुझसे (प्रधानमंत्री से) सांप्रदायिक प्रश्न का समाधान करने के लिए लिखित में अनुरोध करें और यह भी वचन दें कि इस ज्ञापन पर हस्ताक्षर करनेवाले अल्पसंख्यकों के नेता प्रधानमंत्री के निर्णय का पालन करेंगे।

13 नवंबर, 1939 को अल्पसंख्यक समिति की बैठक में गाँधी ने इस ज्ञापन और प्रधामंत्री के निर्णय की तीखी आलोचना की। उन्होंने प्रधानमंत्री को संबोधित करते हुए कहा, ''गत वर्ष आपने इस कठिनाई पर जो जोर दिया और इस वर्ष फिर से उसे दोहराया, उसी का यह परिणाम हैं कि विभिन्न समुदायों को अपने पूरे बल से अपने–अपने दावे पेश करने का प्रोत्साहन मिला। अगर उन्होंने इसके विपरीत कुछ किया होता तो वा मानव स्वभाव के विरूद्ध होता।'' इसके साथ ही गाँधी ने सरकार

की नीयत को उजागर करते हुए कहा, ''मुझे पूरा विश्वास है कि आप लोगों ने हमें छह हजार मील दूर से अपना घर और कामकाज छुड़वाकर, सांप्रदायिक प्रश्न हल करने के लिए एकत्र किया था।'' गाँधी ने कहा, ''हमें यह भरोसा दिया गया था कि भारत की स्वतंत्रता के लिए सम्मान और प्रतिष्ठायुक्त ढ़ाँचा तैयार कर लिया गया है और केवल कॉमंस सभा और लॉर्ड सभा की सहमति मिलना ही शेष रह गया है।''

गाँधी ने कहा कि ''इस समय हमारे सामने बिल्कुल दूसरी ही स्थिति है। वह यह कि हम किसी सांप्रदायिक समझौते पर नहीं पहुँच सके हैं, इसलिए संविधान रचना का काम नहीं होगा। अंतिम उपाय के रूप में आप संविधान और उससे उद्भूत विषयों पर सम्राट सरकार की नीति की घोषणा कर देंगे।''

गाँधी ने गलत नहीं कहा था। दिसम्बर 1931 में प्रधानमंत्री ने लार्ड लोथियन की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की। इसका मुख्य कार्य ऐसी मताधिकारी प्रणाली निर्धारित करना था, जिससे समाज के सभी महत्वपूर्ण वर्गों को अपना मत और आवश्यताओं व्यक्त करने का अवसर प्राप्त हो। डॉ0 अम्बेडकर भी इस समिति के सदस्य नियुक्त किए गए। प्रधानमंत्री ने लॉर्ड लोथियन को पत्र लिखकर सूचित किया कि ''आपकी समिति को मताधिकार के विस्तार की समस्या की जाँच करनी है। इस दौरान आपके पास ऐसे तथ्य भी होंगे, जो दलित वर्गों के पृथक प्रतिनिधित्व की युक्ति तैयार करने में सहायक होंगे।

सन्दर्भग्रंथ

1. वकील, ए0के0–गाँधी–अम्बेडकर हिस्प्यूट, पृ0 17.
2. वकील, ए0के0–उपर्युक्त, पृ0–16–17
3. सं0गां0वा0, खंड 48, पृ0 330–31
4. वही पृ0 331
5 सोर्स मैटीरियल ऑन डॉ0 बाबासाहेब अम्बेडकर एड दि मूवमेंट ऑफ अनटचेबिल्स, वॉ0 1, पृ0 30–31
6. सं0गां0वा0, खंड 48, पृ0 197
7. पलशीकर, वसंत – उपर्युक्त, पृ0 194
8. बा0सा0डॉ0आंसं0वा0, खंड 5, पृ0 194
9. वही, पृ0 194
10. सं0गां0वा0, खंड 48, पृ0 326

11. शर्मा, कुसुम–अम्बेडकर एंड इंडियन कांस्टीट्यूशन, पृ0 132
12. सं0गां0वा0, खंड, पृ0 327
13. सं0गां0वा0 खंड 3, पृ0 327
14. बा0सा0 डॉ0 आं0रा0एंड स्पी0, वॉ0 9, पृ076